ट्रैक्ट नं २

अनेकान्तनयधर्मस्थाय नम

अनोखी ! अनेकान्त नय !

न्याय युक्तियाँ

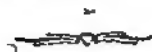
[प्रथम भाग]

रचना संग्रहकर्ता
सनतकुमार जैन, गुना,
वर्तमान निवास कोटा (राजस्थान)

प्रकाशक :
निरंजनलाल जैन
मंत्री- भा व शांतिवीर दि जैन सि सं सभा

श्री वीर निर्वाण स २४९२] - [मूल्य-मुनिभक्ति

प्राक्कथन



दिगम्बर जैन धर्म के प्रचार और प्रसार के नाम पर इन दिनों जो कुछ हो रहा है वह दिगम्बर जैन समाज से छिपा नहीं है। कुछ लोग हैं जो अपने को दिगम्बर जैन धर्म में दीक्षित बताकर अध्यात्म का उपदेश करते फिरते हैं पर वस्तुत न वह अध्यात्म है और न किसी वास्तविक दिगम्बर जैन के मुख से उस प्रकार का अध्यात्म कहा जा सकता है। दिगम्बर जैन धर्म त्याग प्रधान है पर इनके अध्यात्म में त्याग की निंदा की जाती है। दिगम्बर जैन धर्म में मन की तरह वचन और कार्य से भी हिंसादिपाप सेवन का निषेध है पर इनका अध्यात्म वचन और शरीर की क्रिया को जड़ की क्रिया बताकर इनसे होने वाले पापों की उपेक्षा करता है। दिगम्बर जैन धर्म में अरहन्त पद को पुण्य का फल तक बतलाया है पर इनका अध्यात्म पुण्य को विष्ठा बतलाकर दान पूजा आदि पुण्य कार्यों से श्रावकों को अनुत्साहित करता है। दिगम्बर जैनधर्म आध्यात्मिक विकास के लिये वस्त्रादि का परित्याग अनिवार्य घोषित करता है पर इनका अध्यात्म वस्त्रादि को पर द्रव्य बताकर आत्म विकास के लिय उसे बाधक नहीं समझता। इस प्रकार दिगम्बर जैन धर्म की मोहर लगाकर जो अध्यात्म कहा जाता है वह अध्यात्मवाद नहीं

किन्तु दूसरा ही कोई रहस्यपूर्ण 'बाग' है जिससे [illegible] जैन धर्म कोसों दूर है। जब शारीरिक क्रियाएँ एकान्ततः जड़ की क्रिया हैं तो कौन व्यक्ति शारीरिक भोग विलास में [illegible] चाहेगा क्योंकि इन तथा कथित अध्यात्मवादियों के द्वारा जड़ की क्रिया से पुण्य पाप नहीं होता।

इनके मत में नियतिवाद का भी प्रचार किया जाता है। नियतिवाद की व्याख्या ये इस प्रकार करते हैं—'जो कुछ होता है वह सब पहले से नियत है, उसे कोई टाल नहीं सकता। और नियत इसलिये है कि सर्वज्ञ उन्हें पहले ही जान चुका है।' इसका अर्थ यह होता है कि मनुष्य जो कुछ चोरी, व्यभिचार आदि पाप का सेवन करता है वह नियति के आधीन रहकर करता है ऐसी स्थिति में वह दण्ड का पात्र नहीं होना चाहिए क्योंकि उसकी चोरी, व्यभिचार सब सर्वज्ञ पहले ही देख चुके थे। अतः यह बिचारा अपने द्वारा पाप सेवन को कैसे टाल सकता था।

इस प्रकार इनके अध्यात्म में जो कुछ छिपा हुआ है वह पाठकों से अनवगत नहीं होना चाहिए। बुद्ध ने [illegible] शून्यवाद का उपदेश दिया था। उसके बाद उनके अनुयायियों ने उस शून्यवाद की आड़ में जिस अनाचार को जन्म दिया वह धीरे धीरे वाम मार्ग में परिणित हो गया आखिर बुद्ध धर्म को भारत से अपना अस्तित्व खोना पड़ा। [illegible] के ये अध्यात्मवादी भी शरीर की क्रियाएँ जड़ की क्रिया बताकर और पहले से पाप दुराचार आदि को नियत बताकर कुछ ऐसे ही मन्तव्यों का प्रचार कर रहे हैं जिसके परिणाम का अन्दाजा लगाना कठिन नहीं है।

प्रस्तुत पुस्तक ऐसे ही लोगों की एकान्त मान्यता को ध्वस्त करने के लिये लिखी गई है। पुस्तक छन्दोबद्ध है। इसकी जगह यदि यह गद्य में होती तो लेखक के मनोभाव अधिक स्पष्ट हो जाते। तर्कप्रधान रचनाएँ पद्य की अपेक्षा गद्य में ही अधिक प्रभावक रहती है। फिर भी कोटा के सनत्कुमारजी ने इस रचना में श्रम किया है। छन्दों में कहीं २ स्खलन अवश्य है लेकिन रचना के विषय को देखते हुये वह उपेक्षणीय है। पुस्तक सर्व साधारण के लिये पठनीय है और प्रचार के लिये उपयोगी है।

डा० लालबहादुर शास्त्री



अनोखी ! अनेकान्त नय !

न्याय युक्तियाँ

प्रथम – मंगला चरण !

(१)

जिननाम जपने जिन स्मरण से,
रिद्धी सुसिद्धी सब प्राप्त होती।
ऐसे महाबल ! जिन दिव्य गुण !
चरणों में उनके मेरा नमस्ते ॥

(२)

रोगादि व्याधी उपसर्ग वर्ग,
संकट महादुःख शोकादि संग।
जिन भक्तिबल से सब नष्ट होते,
चरणों में उनके मेरा नमस्ते ॥

(३)

घर कुटुम्ब में, युद्धस्थलों में,
पर भाव मंत्रित घातक बलों में।
जिन मंत्र बल से होती विजय है,
चरणों में उनके मेरा नमस्ते ॥

(४)

परयोगनिन्दा परवाद विद्या,
परवर्त योगादिक कलेश कारक।
जिन आज्ञा से सब नष्ट होते,
चरणों में उनके मेरा नमस्ते ॥

(५)

जिनके असंख्य गुणगान करते,
चरणों में जिनके मस्तक झुकाते।
ऐसे प्रमाणिक ! जिन दिव्य हस्ते।
चरणों में उनके मेरा नमस्ते ॥

(६)

मंगल स्वरूपे ! सिद्धे ! प्रसिद्धे !,
शुद्धात्मने ! शुद्ध ! प्रबुद्ध – बुद्धे।
त्रैलोक्य में जो पूजित हुए हैं,
चरणों में मेरा उनके नमस्ते ॥

(७)

ह्रींकार बीजान्वित ! मंत्र मूर्ते !
ॐकार सहिते शास्त्री स्वरूपे।
स्वाहा ! स्वधाकार ! सर्व सुखस्ते।
चरणों में उनके मेरा नमस्ते ॥

(८)

धरणेन्द्र ! इन्द्रादिक भी विनय से,
मस्तक झुकाते चरणों में जिनके।
चरणों में उनके मस्तक झुकाये,
करते विनय से शत-शत नमस्ते ॥

पश्चात् बुद्धि प्रदायनी श्रुत इष्ट देवी सरस्वती ।
सम्पूर्ण ज्ञाता ! जैन माता ! नमोस्तु जिन भगवती ॥

भगवान की दिव्यध्वनि के समय समवशरण में दक्षिण ओर सुशोभित जैन महाविद्या । द्वादशांग पूर्व वाणी धारिणी । षट्पद वाक्यादिनि । स्याद्वाद नय चक्र स्वरूप । चक्र स्वरि । सकल मंत्रधारि । मोक्ष मार्ग प्रबोधिनि । सम्यक् दर्शन सम्पन्ना । सम्यक्ज्ञानपरायणा । सम्यक्चारित्र सहिते । श्रुतदेवि । भगवति सरस्वति । जैन माता । को आगम अनुकूल उनके सत्ता की मौजूदगी का निश्चय करते हुए आदर विनय श्रद्धा के साथ प्रणाम कर आह्वान करता हूँ । यद्यपि मुझ में आध्यात्मिक एवं व्यवहारिक सम्पूर्ण धर्म विषयों को लिखने की शक्ति, निर्णय करने की शक्ति और उनको व्यक्त करने की शक्ति अल्प बुद्धि होने के कारण नहीं है । तथापि आपके स्याद्वाद अनेकान्तमय सम्यक् महान ज्ञान के आश्रय कुछ धार्मिक न्याय प्रसंगों को लिखने उद्यत हुआ हूँ । किसी भी आगम अनुकूल मेरी धार्मिक न्याय रचनाओं में आप सहायक हो ।

नमोस्तु तुभ्यं जगदम्ब भारति,
प्रसाद पात्रं कुरु मां हि किंकरम् ।
तव प्रसादादिह तत्वनिर्णय,
यथा स्वबोधं विदधे स्वसंविदे ॥

आगच्छ तिष्ठो कंठ मम हे रत्नत्रय धर्मावती ।
सम्यक्त्वमई हो बुद्धि पाऊं और माता शुभमती ॥
व्यवहार निश्चय भेद से सब विषय का उल्लेख हो ।
व्यवहार में भी आत्म उन्नति का अनोखा लेख हो ॥
देवशास्त्र गुरु तीन वचन प्रमाण सुलेख हो ।
रत्नत्रय लवलीन मर्यादा उल्लेख हो ॥

आध्यात्मिक इन गूढ़ भेदों का निरूपण कीजिये।
लौकिक अलौकिक विषय के सत्यार्थ निर्णय दीजिये॥
ये स्याद्वाद यथार्थ हों अनेकान्तनय परिपूर्ण हों।
व्यवहार निश्चय भेद के प्रति भेद म उत्तीर्ण हों॥
एकान्तनय के पक्ष का खण्डन यहां सुस्पष्ट हो।
व्यवहार निश्चय धर्म दोनों पक्ष लेना इष्ट हो॥
होवो सहायक लेख म आह्वान करता आपको।
स्वस्ते! प्रसिद्धे! सिद्ध हस्ते! हे नमस्ते आपको॥

—अनेकान्तनय धर्मवाद!

प्रयोजन की साधना मे सफलताओ के प्रदर्शन! और इन याय युक्तियो की रचना करने के प्रमाण भूत आधार!

भगवान कुन्द कुन्द आचार्य! भगवान अकलंक देव! श्री अमृतचन्द्र आचार्य, एव आत्म विद्या सिद्धि प्राप्त श्र योगिराज! महासेन आचार्य। श्री समन्त भद्र स्वामी। श्री गुणभद्र आचार्य श्री पूज्यपादाचार्य। एव श्री पचाध्यायी शास्त्रकार। श्री सकल कीर्ति आचार्य। इत्यादि जैन वीतरागी दिगम्बर महान जैन आचार्यो के अनेका त नय धर्म शास्त्रों के आधारों पर से उनके सत्यार्थ कथनों के विशेष अभिप्रायों को लेते हुए आगम अनुकूल इन न्याय युक्तियों के प्रथम भाग की अभी रचना की गई है। शेष न्याय युक्तियाँ द्वितीय भाग म सम्पूर्ण होंगी।

जैन शासन अनेकान्तनय धर्मा की ये अनोखी न्याय युक्तियाँ जैन शासन क अनेकान्तनय न्याय बलों से अनेकान्तनय याय तर्कवादों से गूँथी गई हैं। जो किसी भी नय के पर वादियों द्वारा जीती न जा सके ऐसी अजेय हैं। इनके कथन

अनेकान्तनय धर्मस्वरूप अनेका तनय ज्ञान द्वारा ही समझे और जान जा सकते हैं। एकान्तनय ज्ञान से नहीं। क्योंकि एकान्तनय ज्ञान एक ही अर्थ मे वस्तु के एक ही गुण धर्म को जानता है जिसके कारण वस्तु के अनेकान्त गुणधर्म उसी में छुपे हुए रह जाते हैं तब अनर्थ हो जाता है। और स्याद्वाद अनेकान्तनय ज्ञान उस एक अर्थ के अनेक अर्थ करता है। जानता है जिसके कारण वस्तु अनेकान्त गुणधर्मात्मक सिद्ध हो जाती है।

देखो—ज्ञान के विषय मे भगवान अकलंक देव ! सत्यार्थ निर्णय करते हैं कि—जो ज्ञान एक ही अर्थ को जानता है वह अनेक अर्थ को कैसे जान सकेगा। पुरुष विषयक ज्ञान पुरुष को ही जानेगा। स्थाणु विषयक ज्ञान स्थाणु को ही जानेगा। मोक्ष विषयक ज्ञान मोक्ष को ही जानेगा। अतः एक ज्ञाननय का दो अर्थो को जानना जब सम्भव ही नहीं है तो न संशय हो सकता है और न विपर्यय ही। और निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध न मानने मे समस्त अनुभव सिद्ध व्यवहार नय धर्म का लोप हो जायगा।

—देखो राजवार्तिक भगवान अकलंक देव !

अब सर्व श्रावक भाइयों की जानकारी के लिए निश्चय और व्यवहार दोनों धर्मनयों की पवित्रता सत्यार्थता तथा उपादेयता में आश्चर्य जनक ! कथन उन परम वीतरागी दिगम्बर जैन आचार्यों के अनेकान्त नय धर्म स्वरूप ! अनेकान्त नय न्याय बला से, अनेकान्त नय भेदनयों से, और अनेकान्त नय न्याय तर्कबाणों से जैन शासन अनेकान्त ! अनोखी ! न्याय युक्तियो द्वारा संक्षिप्त मे करते हैं—

व्यवहार निश्चय धर्म की उलझी हुई हैं गुत्थियाँ।
सुलझा रहे आचार्य वर ! लेकर अनोखी युक्तियाँ ।।
बिन युक्तियों के पाईं किसने आत्मबल की शक्तियाँ।
बिन युक्तियों के प्राप्त किसने की अभी तक मुक्तियाँ ।।
उन क्रिया शीला ने करीं भगवान की जब भक्तियाँ।
तब अनेकों उन युक्तियों से मिलीं उनको मुक्तियाँ ।।
भगवान की हो भक्तियों में व्याप्त हैं वे युक्तियाँ।
नित पान करिये जैन शासन की अनोखी युक्तियाँ ।।

—जैन शासन न्याय तर्कवाद।

जैन शासन अनेकान्त नय धर्मों की अनोखी न्याय युक्तियाँ !

निश्चय और व्यवहार दोनों धर्म नय। भगवान सर्वज्ञ देव के कथन किए हुए होने के कारण सत्यार्थ है —

अनेकान्त निर्णय ज्ञान में निश्चय धरम सत्यार्थ है।
अनेकान्त निर्णय ज्ञान में व्यवहार धर्म यथार्थ है ।।
ज्ञाना चरित्र पवित्र हैं आपस में दोनों भिन्न हैं।
दोनों ही भेद अभेद रूपी रतनत्रय कर युक्त हैं ।।
दोनों में साधक-साध्य का सद्भाव, होना अर्थ है।
व्यवहार, निश्चय को असंगत मानना ही व्यर्थ है ।।

—भगवान कुंदकुंद आचार्य

व्यवहारनय धर्म की उपादेयता के कारण को कहते हैं —

निश्चय नय है रतनत्रय उपादेय अतिमान।
मोक्ष मार्ग व्यवहारनय कारण इसका जान ।।
कारण होने से बना उपादेय व्यवहार।
मोक्ष मार्ग के प्रदर्शक दोनों ही हितकार ।।

—भगवान कुंदकुंद आचार्य

आचार्य महाराज और भी उदाहरण देते हैं —

जैसे अशुद्धित स्वर्ण का मल नष्ट करने के लिए।
अग्नी ही साधक हो मरे है शुद्ध करने के लिये॥
वैसे ही यह व्यवहार साधक और निश्चय साध्य है।
बिन साध्य साधक भाव के दोनों ही साध्य असाध्य है॥

—भगवान कुंदकुंद आचार्य

व्यवहार नय ही सार्थक है —

सविकल्प खोटे ध्यान को निर्मूल करने के लिये।
सविकल्प उत्तम ध्यान को अनुकूल करने के लिये॥
व्यवहारनय ही सार्थ है शुभ भाव धरने के लिये।
रागादि द्वेषक कषायों को दूर करने के लिये॥

—भगवान कुंदकुंद आचार्य

दर्शन विशुद्धित ज्ञान चारित्रिक स्वाभाविक धर्म है।
रागादि द्वेषक कषायों से रहित इसका मर्म है॥
शुभ भाव आलम्बन सहित परमार्थ का कर्ता सभी।
ऐसे उचित व्यवहार को नहिं विस्मरण करना कभी॥
ऐसे पुण्य व्यवहार को यदि छोड़ देते हैं अभी।
सत्यार्थ निश्चय धर्म ही केवल उपादेय है सभी॥
इस प्रयोजन से जो ग्रहण करते हैं निश्चय धर्म को।
चारित्र से वे भ्रष्ट हैं नहिं जानते इस मर्म को॥

—जैनशासन न्यायबल

भगवान सर्वज्ञ देव के कथन किए हुए चलाए हुए निश्चय और व्यवहार दोनों धर्मनयों की रक्षा करने वाले कौन होते हैं? तब श्री अमृतचन्द्र आचार्य महाराज कहते हैं —

व्यवहार निश्चय धर्म दोनों को समझते जानते।
सर्वज्ञ भगवन! वे यह दोनों यथार्थ प्रमानते॥
ऐसे हैं जो गुणवान दोनों नया से परिपूर्ण हैं।
वे पुण्य रूपी धर्मतीर्थों के प्रवर्तक पूर्ण हैं॥

—श्री अमृतचन्द्र आचार्य

और तीर्थंकरों के स्थापित किए हुए पुण्य रूपी धर्म तीर्थों को अनेकान्तनय धर्मों को उनके महान शुभ बाह्य क्रिया रूप चारित्रादि आचरणा को नष्ट करने-वाले लोप करने वाले कौन होते हैं?

तब श्री अमृतचन्द्र आचार्य महाराज कथन करते हैं कि—
सम्यक अनेकान्त नय भेदनय आगम कथन,
जाने बिना शुद्ध निश्चय धर्म को न जानते।
यही एक निश्चय है और अन्य कोई नहीं,
मिथ्या एकान्तनय ज्ञान से प्रमानते॥
ज्ञान के अभाव में निश्चय नयी होने के,
करते प्रयत्न और होते प्रवेश हैं।
ऐसे जीव पहले ही व्यवहारनय साधन छोड़,
होते प्रमादी स्वछन्दी विशेष हैं॥

और—

निश्चयनय धर्म का स्वरूप सत्य जाने बिना,
निश्चय श्रद्धान को ही करें अंगीकार हैं।
बाह्य क्रिया कर्मनय में आलसी है ऐसा जीव
व्यवहार को लोप करे मन का विकार है॥
और बाह्य क्रिया रूप आचरणों को नष्ट करे,
मूर्ख है वह ऐसा जीव, न्याय का प्रसंग है।

मर्ने ही व्यवहार के धर्मादि चरण नष्ट होय,
तासैं दोना धर्म नय श्रेष्ठता के अंग हैं ॥
—श्री अमृतचन्द्र आचार्य

और यह भी पुष्प निश्चय धर्म को लाप करता है जो –
जो पुण्य व्यवहार से ही एक निश्चय जानता ।
है यही निश्चय पर केवल अन्य को नहीं मानता ॥
वह शुद्ध आत्मा की न्या को नष्ट करता है सदा ।
निश्चय धरम का लोपकारी मूर्ख है वह सर्वदा ॥
—श्री अमृतचन्द्र आचार्य

अब आचार्य महाराज बुद्धिमान सम्यग्दृष्टि जीवों के आचार विचार का कथन करते है –

अनरा उपचार के यथना के ज्ञाता और,
जीवा के कर्मबद्धरूप को निहारते ।
जानते ममारी दशा शरीरी सम्बन्धरूप,
कारण जो आश्रव बन्धों का मानते ॥
करते उपाय मुक्ति होन के निर्णय कर,
संवर निर्जरादि रूप तत्वों में वर्तते ।
ऐसे बुद्धिमान क्रियावान अनेकान्त से,
सम्यक् दृष्टा उभय धर्म में प्रवर्तते ॥
श्री अमृतचन्द्र आचार्य !

जब मोक्ष मारग के प्रदर्शक धर्मनय दोनों बड़े !
सर्वज्ञ का यह कथन है फिर एकनय पर क्यों अड़े ?
सत कथन कर्ता प्रवर्तक सर्वज्ञ देव महान हैं !
दोनों धरमनय के कथन ही स्वयं सत्य प्रमाण हैं !!

भगवान के ऐसे वचन अनेकों ग्रन्थ प्रमाणिते।
द्वारा धर्म मार्ग पक्ष निश्चय अभेद बतावते।
व्यवहार को छोड़ हुए जो पर धर्म प्रमाणते।
जो दान पुण्य शुभक्ति पूजा बंध कारण मानते।
उनके लिए श्री कुन्दकुन्दाचार्य के उपदेश हैं।
आचार्य अमृतचन्द्र के इस विषय में आदेश हैं।
अनेकों न ग्रन्थों में कथन करते हुए विस्तार से।
फिर किन निश्चय के वचन सब एक निश्चयसार से।

आगम विपरीत दूषित वातावरणों, दूषित वचनों के प्रतिकूल भगवान कुन्दकुन्दाचार्य कहते हैं कि जो पुण्य क्या कहें कि-

भगवान की भक्ति परम पुण्यादि हैं वे बन्ध नय।
इनसे धरम होता नहीं, होता हुआ देखा है कब।
इत्यादि मिथ्या कथन से स्वयं अहित अपना कर रहे।
एकान्तनय के ज्ञान में बेहोश होकर बह रहे॥

इस ऐसे नास्तिक मति जीवों को भगवान कुन्दकुन्दाचार्य ताड़ना देते हैं, उनको धिक्कारते हैं कि क्या जीव कैसा है?

आगम विपरीत जो पूजा भक्ति पुण्य को
कहें कि यह तो बन्ध का कारण महान है।
कर दे उत्थापन जो धर्म पुण्य कार्यों का,
कैसे कहो आत्मा का होगा कल्याण है?
जैसे एक कोढ़ी पुण्य अपना कुल नाश कर,
तैसे आगम विरुद्ध करता अज्ञान है।
कुंदकुंदाचार्य कहे नास्तिक है ऐसा जीव,
पूजा को भी बन्ध माने कोढ़ी समान है॥

—भगवान कुंदकुंद आचार्य

ऐसा कहते हुए आचार्य महाराज जीवों को उपदेश देते हैं कि वही पुरुष सम्यग्दृष्टि बुद्धिमान है जो

देव शास्त्र गुरु की पूजा भक्ति नित्य कर,
मान सम्मान करता वही बुद्धिमान है।
पर ही अपनी भक्ति पापों का नाश करे,
मुक्ति मार्ग कारण प्रधानता महान है॥

दर्शन चारित्रादि क्रिया से सम्पन्न हुवा
ऐसा जीव आत्मा का करता कल्याण है।
नित्य ही भगवान की जो भक्ति कर मुक्ति हेत,
वहां जीव सम्यक सगुण धर्मवान है॥

—भगवान कुंदकुंद आचार्य

और जो जीव बिना कारण अपेक्षा के पुण्य और पुण्यानुबन्धी पुण्य को भी बंध का, भ्रमण का कारण मानते हैं वे तीर्थंकरों महापुरुषों—पुण्यप्रकृतियों का अपमान करते हैं। किन्तु भगवान कुंदकुंद आचार्य तीर्थंकरों—पुण्यप्रकृतियों की अपेक्षा पुण्य का आदर सन्मान करते हुए श्रावकों को पुण्य संचय का उपदेश देते हैं।

जो बिना कारण पुण्य को भी बंध कारण मानते।
भगवान के अनेकांत धर्म को नहीं वे जानते॥
वे पुण्य प्रकृति महान तीर्थंकर वह पुण्यात्मा।
भूले हुए हैं पुण्य उनके—पुण्यद्रोही आत्मा॥
करते अहित निज आत्मा को पुण्य हीन बना रहे।
श्री कुंदकुंदाचार्य भगवान पुण्य मंडन कर रहे॥

हे श्रावको !

उस पुण्य रूपी धर्म म श्ररता प्रवर्तन धर्म है।
सब पाप के आरम्भ से होना निवर्तन कर्म है।
इसलिए प्राणी पुण्यमयी तू धर्म का ही ध्यान कर।
सर्वज्ञ ने यह कहा है सत्यार्थ हित को जानकर॥

—भगवान कुंदकुंद आचार्य

यदि कोई ऐसा कहे पुण्य की न परवा करू,
अपने पुरुषार्थ से ही ज्ञान योग वृद्धि है।
अकेला पुरुषार्थ ही समस्त कार्य सिद्ध कर,
पुरुषार्थ से ही सम्पन्नता समृद्धि है॥
है तो बात सही किन्तु पुण्योदय काल बिना,
केवल पुरुषार्थ को ही माने अज्ञान है।
बिना पुण्यसमा य सफलता न प्राप्त होय
पुरुषार्थ की सफलता म पुण्य ही प्रधान है॥

—श्री गुणभद्र आचाय

बिना पुण्य आत्मा को कितना ही क्लेशित करें,
कितना पुरुषार्थ करें कुछ भी न अर्थ है।
जैस ज्ञान हीन की क्रियायें सब निष्फल रहें,
तैसे पुण्यहीन का पुरुषार्थपना व्यर्थ है॥
पुण्य का संसर्ग होना सर्व कार्य सिद्धि अर्थ,
उत्तम ई लाभकारी, न्याय का प्रसंग है।
देखो रथ एक चक्र द्वारा कभी न चले,
यही तो न्याय बल की युक्तियों का अंग है॥

—जैन शासन अनेकान्त न्यायबल

जैसी करनी वैसी भरनी —

पुण्य की करनी करी तो बनगया पुण्यात्मा।
मोक्ष की करनी करी तो बनगया परमात्मा।।
पाप की करनी करी तो बनगया पापात्मा।
द्रव्य करनी से बडे हैं द्रव्य इनसे आत्मा।।

—जैनशासन प्रत्यक्षवाद

आत्मविद्या सिद्धि प्राप्त योगिराज श्री महासेन आचार्य ! पुण्य और पाप की शक्तियों का कथन करते हैं –

पुण्य की प्रबलता म धर्म साधनादि होय,
पाप की प्रबलता म सभी कुछ नष्ट है।
पुण्य की प्रबलता म जीव मग्न सुखी रहे,
पाप की प्रबलता में कछु नाहीं इष्ट हैं॥
पुण्य को विधान पुण्य प्रकृति करन हारो,
ऐसो सहारो और अन्य नहीं सभव है॥
बिना पुण्य प्रबलता के और की तो बात क्या,
कर्मो की निर्जरा भी होना असभव है॥

—श्री महासेन आचार्य

पुण्य की प्रबलता म रोग शोक नष्ट होत,
पुण्य की प्रबलता में सकट विनष्ट है।
पुण्य की प्रबलता म सभी कुछ सिद्ध होत,
धर्म अर्थ काम मोक्ष होना स्पष्ट है॥

पुण्य की प्रबलता से धरणेन्द्र का आसन कंपे,
और की तो बात क्या है इन्द्र भी आकृष्ट है।
बिना पुण्य जीव की कहो रक्षा कौन करे,
पुण्य हीनताई बड़ा भारी अनिष्ट है।।

—श्री महासेन आचार्य।

लौकान्तिक देवों-मुक्त मुनियों के पुण्य और पुण्यानुबन्धी पुण्य के महान प्रभावक आश्चर्यजनक विषयों की ओर भी विशेष विस्तार से जानने के लिए पुण्य विधान रचना संग्रह को पढ़े। और मनन करे।

श्री महासेन आचार्य महाराज के जिनागमसार पूर्वार्द्ध के चतुर्दश सर्ग में लिए गये आत्म विद्या के आश्चर्य जनक कथनों को संक्षिप्त में कहते हैं—

श्री महासेनाचार्य के हैं आत्म विद्या के कथन।
आचार्य के कथन हैं सर्वज्ञ जैन ही वचन।।
कर्मों की होती निर्जरा होता है संवर बंध का।
जो पूर्व के हैं अशुभ बन्धन व ही के संबंध का।।

होती है उनकी निर्जरा शुभ बंध की होती नहीं।
शुभबंध की यदि निर्जरा हो, निर्जरा फलती नहीं।।

रुकते नवीन कुबंध हैं शुभबंध रुकते हैं नहीं।।
शुभ बंध भी रुकने लगे तो जीव फल भुगते नहीं।

शुभ अशुभ बन्धों के निमित्तों से शुभाशुभ है गति।
शुभ बंध फल की सुगति होती अशुभ फल की दुर्गती।

उस निर्जरा से पाप झड़ते पुण्य झड़ते हैं नहीं।
यदि पुण्य भी झड़ने लगे तो पुण्य फल मिलते नहीं॥
पुण्यानुबंधी पुण्य फल से फलित रहता आत्मा।
पुण्यात्मा ही पुण्य की होती प्रकृति परमात्मा॥
परमात्मा की भक्तिया से पुण्य का संचय हुवा
तब पुण्य की क्या निर्जरा हो? न्याय में निर्णय हुवा।
शुभ बंध ही काटे अशुभ बंधों को ऐसा न्याय है।
शुभ बंध की भी निर्जरा को मानना अन्याय है॥
पुण्य जिनके क्षीण होते देखलो उनकी दशा।
बिन पुण्य के ही जीव की होती रही है दुर्दशा॥
जब पुण्य का हो उदय तब ही निर्जरा होती सभी।
पापोदया में निर्जरा होती हुई देखी कभी?

—श्री महासेन आचार्य!

आचार्यों ने पुण्यवाता की रची है कथायें।
उस पुण्य रूपी धर्म की कितनी चलाई [illegible]
श्री कुन्दकुन्दाचार्य थे भी पुण्य के प्रति [illegible] हैं।
वे सर्व ही सर्वज्ञ जैसे सत्य रूपी [illegible] हैं।
आचार्यों का सब कथन अब लोप होता [illegible]
सर्वज्ञ ही जान भविष्यत समय कैसा [illegible]
है धन्य उन आचार्यों को कर्म [illegible]
भगवान की करना प्रथम भक्ति यही [illegible]
फिर दान पुण्यादिक सभी करना [illegible] है।
होना प्रवर्तन धर्म में यह आत्मा का [illegible]

भगवान की भक्ति हृदय जिनके समाई है अभी।
त्रैलोक्य की ही सम्पदा उनको न भायी है कभी ॥
इस भक्ति में ही छुप रहा है आत्मा का धर्म है।
जब धर्म है तो धर्म ही अपना हुआ सत्कर्म है ॥
तपशील संयम व्रतों का सेवन सदा करते जि हैं।
उनके हृदय से पूछिये क्या और कुछ रुचते उ हैं ॥
चारित्र दर्शन ज्ञान रूपी भावना भाते जिन्हें।
उनके हृदय से पूछिये क्या और कुछ भाता उन्हें ?
भगवान की भक्ती परम पुण्यादि जो करते जिन्हें।
उनके हृदय से पूछिये आनंद क्या आता उन्हें ?
आनंद में ही व्याप्त है सब गुणों का जो सार है।
आनन्द में इस जीव का उद्धार ही उद्धार है ॥

—न्याय तर्कवाद !

वादी की यह प्रतिज्ञा थी कि अकले ज्ञानमय से ही कर्म कट जाते हैं। ऐसा एकान्त नय की प्रतिज्ञा को भगवान अकलंक देव स्याद्वाद अनेकान्तवाद द्वारा खण्डन करते हैं—

श्री अकलंक सुदेव जो जग में हुए प्रसिद्ध।
न्यायालंकारित रची राजवार्तिक सिद्ध ॥
जिनके वचन अकाट्य हैं जीत सके ना कोय।
तारा देवी। सम यदि प्रबल बुद्धिवर होय ॥
जीत सकी तारा नहीं फिर किसकी सामर्थ।
सिंह शक्ति के सामने स्यार शक्ति है व्यर्थ ॥
जिनके कथन प्रमाणते बड़े-बड़े विद्वान।
सिद्ध हुए उनके कथन आगम कथन प्रमाण ॥

कहते श्री अकलंक जी एक ज्ञान नय सार ।
उपयोगी होता कहीं हो जाता उद्धार ॥

रहता फिर जीवात्मा इसी ज्ञान आधार ।
दर्शन चारित्रिक क्रिया क्यों करता अनिवार ॥

एक ज्ञाननय से यदि जीव मुक्ति को पाय ।
ध्यान तपश्चर्या क्रिया के क्यों करे उपाय ??

एक ज्ञान ही ज्ञान का फिर होना उपयोग ।
पूजा भक्ति प्रमाण का क्या रहता संयोग ??

होते ही इस ज्ञान के हो जाता वह मुक्त ।
क्यों ठहरा संसार में, कथन नहीं उपयुक्त ॥

अवधिज्ञान धारी बड़े अनेकान्त नय युक्त ।
एक अकेले ज्ञान से नहीं हुए हैं मुक्त ॥

दर्शन चारित्रिक क्रिया जप तप ध्यान समेत ।
ऐसे उत्तम कर्मनय विण मुक्ति के हेत ॥

मुक्त हुए सब शीघ्र ही क्रिया धर्म आधार ।
दर्शन बल चारित्र बल ! बिना न हो उद्धार ॥

लागे ऐसा ज्ञाननय क्रिया बिना है नष्ट ।
ज्ञान सहित क्रिया करे वही ज्ञान है इष्ट ॥

श्रद्धा में सब झलकते कथन प्रत्यक्ष परोक्ष ।
आचारांग क्रिया बिना कभी न सम्भव मोक्ष !!

अतः कर्मनय ज्ञाननय दोनों का संयोग ।
होना ही अनिवार्य है तभी सफलता योग !!

धर्म रत्नत्रय का कहो क्या होवे है अर्थ !
तीनों में से एक को छोड़ा तो सब व्यर्थ ॥

तातें तीना धर्म को पकड़े रहो सुजान।
मिले हुए तीना रहे तब होगा कल्याण॥
धर्म रतन त्रय को कहा त्रिबल योग बलवान।
तीनों की ही साधना मोक्ष मार्ग पहिचान॥

—भगवान अकलंकदेव।

साराश यह है रतन त्रय म क्रिया एक प्रधान है।
चारित्र दर्शन के बिना सब ज्ञान कोरा ज्ञान है॥
इस भेद रूपी रतन त्रय की क्रिया ही से प्राप्त है।
ऐसा महान अभेद है जो भेद ही म व्याप्त है॥
चारित्र दर्शन की क्रियाओं का बड़ा ही मर्म है।
इनके बिना जो धर्म है वह एक सूखा धर्म है॥

—न्यायबल

चारित्र दर्शन क बिना क्या ज्ञान से ही आत्मा।
जाना किसी ने क्या कभी बनता हुआ परमात्मा॥
सर्वार्थ सिद्धी देव भी आध्यात्मिक ज्ञानी बड़े।
चारित्र दर्शन के लिए ललचायते रहते खड़े॥

चारित्र दर्शन की क्रियाय स्वर्ग म होती नहीं।
उनकी अकेले ज्ञान नय से मुक्ति भी होती नहीं॥
अत एव वे ससार म चारित्र दर्शन पायेंगे।
तब ध्यान तप रूपी क्रिया से मुक्त होते जायगे॥

—न्यायबल।

यह ज्ञान दीपक श्रेष्ठ है यह जानते बुध जन सभी।
पर तेल बत्ती के बिना दीपक जला भी है कभी?

इसको जलाने मिथ्यामल का है [illegible] ।
जो क्रिया बिन दीपक जलादे स [illegible] ।

—[illegible]

बिन क्रिया करनी कर्मनय के कौन [illegible] ।
जो स्वय अपने आप हो य पल [illegible] ।
बिन ज्ञान रूपी कर्मनय के धर्मनय [illegible] ।
करनी से फल निश्चित मिले करनी [illegible]

जिसने न की करनी कभी करनी [illegible]
इस हीनता म आत्मा ससार म [illegible]
ये कौन से हैं क्रिया करनी [illegible]
अकलंक स्वामी ने किये इनके [illegible]

आचार और विचार रखना धर्म [illegible] है ।
जो धर्म आचारांग होता धर्म [illegible] है ।
अकलंक स्वामी ने कहा जो [illegible] ।
चारित्र दर्शन मल क्रिया का [illegible]
इनके लिए है कठिन मुक्ति [illegible] है ।
अब क्रिया करनी कुछ नहीं [illegible] है ।

आचार्यों के कथन ऐसे [illegible] ।
एकान्तनय के ज्ञान से सब [illegible] रहे ॥
एकान्त नय का ज्ञान [illegible] रहा ।
सर्वज्ञ ही जाने भविष्यत [illegible] रहा ॥

उपवास व्रत की क्रियाएं [illegible] है स्वामी ।
मण्डल विधानादिक क्रिया [illegible] है

द्रव्यों को धोने की क्रिया में पाप का उपयोग है ।
भगवान के प्रति चढ़ाना भी बन्धकारी योग है ॥
अभिप्राय इसका है यही व्यवहारनय सब अंध है ।
भगवान की सब भक्तियां आस्रवकारी बन्ध है ॥
प्रतिकूल आगम कथन के मिथ्या कथन यह हो रहा ।
सर्वज्ञ ही जाने भविष्यत समय कैसा आ रहा ॥
शुभ हो अशुभ हो चाहे जैसा बंध एक समान है ।
एकान्तनय का ज्ञान जैसा कह रहा अज्ञान है ॥
सब बुद्धिमानों ने कहा अनेकान्त नय के ज्ञान से ।
अनेकान्त नय के न्याय बल से सर्व शास्त्र प्रमाण में ।
यदि एक सम ही बन्ध है तो भिन्न फल क्यों पा रहा ?
शुभगती और अधोगति में आत्मा क्या जा रहा ?
जब बन्ध एक समान है फिर किस लिए सुरस्वर्ग है ?
सुर स्वर्ग के प्रतिकूल क्या होता रहा दुःख वर्ग है ?
दुःखवर्ग के प्रतिकूल फिर उसको मिला क्यों स्वर्ग है ?
फिर स्वर्ग के प्रतिकूल पाया जीव ने क्या नर्क है ??

—न्यायतर्कवाद ।

यह सिद्ध है शुभ बन्ध बिन शुभ गती पाना कठिन है ।
सम्यक्त्व रूपी बन्ध बिन सम्यक्त्व पाना कठिन है ॥
पुण्यानुबन्धी पुण्य बिन लोकान्त जाना कठिन है ।
सर्वार्थसिद्धी बन्ध बिन वहां उपजना भी कठिन है ॥
सम्यक्त्व पुण्य सुबन्ध बिन मिलता चरम शरीर है ।
यह आत्मा भी इसीसे होता रहा अशरीर है ॥
जब बन्ध होगा नर्क का तब जीव जावेगा वहां ।
बिन बन्ध अपने आप ही जाता हुवा देखा कहां ??

इस भांति मुक्ती बन्ध होगा आत्मा को जब यहाँ ।
अनुकूल इसके आत्मा तब गमन कर देगा वहां ॥
जो बन्ध निश्चित हो चुका है जहाँ जाने के लिये ।
विपरीत इसके गमन भी कैसे करे अपने लिये ॥

जब बन्ध तीर्थंकर हुआ तब ही तो तीर्थंकर बने ।
वे कौन से है आत्मा बिन बन्ध तीर्थंकर बने ??
बिन बन्ध के कोई बतादें गमन करता आत्मा ?
परमात्मा के बन्ध बिन कैसे बने परमात्मा ??

—न्याय तर्कवाद !

शुभ अशुभ बन्धों के अनेकों मेन्नय के कथन हैं ।
शुभ अशुभ एक समान मानें यही मिथ्या वचन हैं ॥
शुभ बन्ध में है निर्जरा शुभ बन्ध मुक्ती रूप है ।
शुभबन्ध ही इस आत्मा का धर्म रूप स्वरूप है ॥
शुभबन्ध बिन वे कौन ऐसे हो गये हैं आत्मा ?
जो स्वयं शुभगति प्राप्त करके बन गये परमात्मा ??

—न्याय तर्कवाद !

पर आजकल का ज्ञान मिथ्या कथन उल्टा कर रहा ।
जो मार्ग सीधा मोक्ष का था आज उलटा बन रहा ॥
हम चल रहे हैं मार्ग उलटे समय पलटा खा रहा ।
सर्वज्ञ ही जाने भविष्यत समय कैसा आ रहा ॥

शुभबन्ध के सापेक्ष से ही धर्म निश्चय साधना ।
इन अशुभ बन्धों के लिये शुभ बन्धनों से काटना ॥
लोहे को लोहा चाहिये लोहा ही काटे लोह को ।
शुभ मोह क्षय में नष्ट कर देता अशुभ के मोह को ॥

द्रव्या को धोने की क्रिया में पाप का उपयोग है ।
भगवान के प्रति चढ़ाना भी बन्धकारी योग है ॥
अभिप्राय इसका है यही व्यवहारनय सब अध है ।
भगवान की सब भक्तियों में भ्रमणकारी बन्ध है ॥
प्रतिकूल आगम कथन के मिथ्या वचन यह हो रहा ।
सर्वज्ञ ही जाने भविष्यत समय कैसा आ रहा ॥
शुभ हो अशुभ हो चाहे जैसा बंध एक समान है ।
एकान्तनय का ज्ञान ऐसा कह रहा अज्ञान है ॥
सब बुद्धिमानी ने रहा अनेकान्त नय के ज्ञान में ।
अनेकान्त नय के न्याय बल में तर्क शास्त्र प्रमाण में ।
यदि एक सम ही बंध है तो भिन्न फल क्यों पा रहा ?
शुभगती और अधोगति में आत्मा क्या जा रहा ?
जब बन्ध एक समान है फिर किस लिये सुख वर्ग है ?
सुख वर्ग के प्रतिकूल क्यों होता रहा दुःख वर्ग है ?
दुःखवर्ग के प्रतिकूल फिर उसको मिला क्या स्वर्ग है ?
फिर स्वर्ग के प्रतिकूल पाया जीव ने क्यों नर्क है ??
—न्यायलकवाद !

यह सिद्ध है शुभ बन्ध बिन शुभ गती पाना कठिन है ।
सम्यक्त्व रूपी बन्ध बिन सम्यक्त्व पाना कठिन है ॥
पुण्यानुबंधी पुण्य बिन लोकान्त जाना कठिन है ।
सर्वार्थसिद्धी बन्ध बिन वहाँ उपजना भी कठिन है ॥
सम्यक्त्व पुण्य सुबन्ध बिन मिलता चरम शरीर है ।
यह आत्मा भी इसीसे होता रहा अशरीर है ॥
जब बन्ध होगा नर्क का तब जीव जावेगा वहां ।
बिन बन्ध अपने आप ही जाता हुवा देखा कहां ??

इस भांति मुक्ती बन्ध होगा आत्मा को जब यहां ।
अनुकूल इसके आत्मा तब गमन कर देगा वहां ॥
जो बन्ध निश्चित हो चुका है जहां जाने के लिये ।
विपरीत इसके गमन भी कैसे करे अपने लिये ॥

जब बन्ध तीर्थंकर हुवा तब ही तो तीर्थंकर बने ।
वे कौन से है आत्मा बिन बन्ध तीर्थंकर बने ??
बिन बन्ध के कोइ बतादे गमन करता आत्मा ?
परमात्मा के बन्ध बिन कैसे बने परमात्मा ??

—न्याय तर्कवाद !

शुभ अशुभ बन्धों के अनेकों भेन्नय के कथन हैं ।
शुभ अशुभ एक समान मानें यही मिथ्या वचन हैं ॥
शुभ बन्ध म है निर्जरा शुभ बन्ध मुक्ती रूप है ।
शुभबन्ध ही इस आत्मा का धर्म रूप स्वरूप है ॥
शुभबन्ध बिन थे कौन ऐसे हो गये हैं आत्मा ?
जो स्वयं शुभगति प्राप्त करके बन गये परमात्मा ??

—न्याय तर्कवाद !

पर आजकल का ज्ञान मिथ्या कथन उलटा कर रहा ।
जो मार्ग सीधा मोक्ष का था आज उलटा बन रहा ॥
हम चल रहे हैं मार्ग उलटे समय पलटा खा रहा ।
सर्वज्ञ ही जाने भविष्यत समय कैसा आ रहा ॥

शुभबन्ध के सापेक्ष से भी धर्म निश्चय साधना ।
जब अशुभ बन्धों के लिये शुभ बन्धनों से काटना ॥
लोहे को लोहा चाहिये लोहा ही काटे लोह को ।
शुभ मोह अन्त में नष्ट कर देगा अशुभ के मोह को ॥

एकान्त नय के पक्ष में यदि दक्ष होकर के रहें।
अनेकान्त धर्मों पर वृथा आक्षेप करते ही रहें॥
इस भेदनय आगम कथन का फिर कहो क्या अर्थ है ?
जब भेदनय ही ना रहा आगम कथन फिर व्यर्थ है॥

—न्यायबल।

सर्वोच्च सीढ़ी ऊपरी है शुद्ध निश्चय धर्म की।
पर प्रथम सीढ़ी मुख्य है व्यवहार नय के धर्म की॥
जब प्रथम सीढ़ी से चढ़ें ऊपर पहुँचना होय तब।
बिन प्रथम सीढ़ी के चढ़े ऊपर गया है कौन कब ??

क्रमवार सीढ़ी जो चढ़ें, वे शीघ्र ऊपर पहुँचते।
है धर्म मर्यादा यही गुणवान इसको समझते॥
पर आजकल प्रतिकूल इसके धारणा क्या हो रही।
उनका तन्मय धर्म के प्रति विपरीत बुद्धि हो रही॥

चढ़ते हैं एक छलांग में निश्चय शिखर पर जो कभी।
गिरते हैं पीछे लौटकर वे प्रथम सीढ़ी पर सभी॥
व्यवहार नय के धर्म की जब प्रथम सीढ़ी चढ़ गये।
तब और भी आगे बढ़े क्रमवार सीढ़ी चढ़ गये॥
इस रीति से सर्वोच्च सीढ़ी शुद्ध नय की पा गये।
होना चरम उन्नति हुए वे शुद्ध नय में आ गये॥

इस शुद्ध नय में आ गये का यह नहीं अभिप्राय है।
चारित्र दर्शन छोड़ दो बस एक निश्चय मात्र है॥
यदि एक निश्चय मात्र होता लोप हो जाते सभी।
अनेकान्त धर्म स्वरूपमय ये कथन ना होते कभी॥

जब कथन दोनों धर्म नय के किए हैं भगवान ने ।
पकड़े रहो दोनों प्रसंग फिर क्यों पड़े अज्ञान में ?
अनेकांत नय धर्मों के ज्ञाता जानते इस मर्म को ।
व्यवहार निश्चय धर्म को इनके अनोखे धर्म को ॥

—यापवल !

व्यवहार निश्चय धर्म दोनों ही समुन्नत धर्म हैं ।
ये धर्म दोनों आत्मा के ही स्वभाविक धर्म हैं ॥
व्यवहारनय के धर्म द्वारा ही प्रवर्तन अर्थ है ।
निश्चय धरम का लाभ लेना, अन्यथा सब व्यर्थ है ॥
अनेकान्त धर्म स्वरूप कथनों में न अब श्रद्धान है ।
ना क्रिया है ना आचरण भगवान ! कैसा ज्ञान है ??
भगवन् ! तुम्हारे ही अनेकों धर्म के प्रति वचन हैं ।
उन वचन के आधार से आचार्यों के कथन हैं ॥
आचार्यों के कथन ऐसे लोप हमने कर दिये ।
उनके कथन को काटकर अपने कथन को भर दिये ॥
इस भांति से एकान्तनय का ज्ञान उलटा चल रहा ।
सर्वज्ञ ही जाने भविष्यत समय कैसा आ रहा ??
ये शुद्ध बुद्ध निरंजनादिक आत्माएँ व्यर्थ हैं ।
संसार रूपी आत्माएं सिद्ध सम शुद्धार्थ हैं ॥
बिन अपेक्षा मानते संसार रूपी आत्मा ।
है सांख्यमत की तरह से शुद्धात्मा = परमात्मा ॥
इस तरह से निज आत्मा को शुद्ध अनुभव हो रहा ।
मिथ्यानुभव के कारणों से अहित अपना हो रहा ॥
निज आत्मा परमात्मा सम शुद्ध यदि होता नहीं ।
तो रत्नत्रय के धर्म का सेवन कभी होता नहीं ॥

स्याद्वाद—प्रत्यक्षवाद !

तब मोक्ष मार्ग प्रदर्शकों का कथन ही सब व्यर्थ था।
परमात्मा की भक्तियों का फिर कहो क्या अर्थ था?
संन्याय आभ्यन्तर तपों को किस लिये तपते सभी?
यदि शुद्ध होता आत्मा तो भक्तियाँ करते कभी?
निज आत्मा यदि शुद्ध है तो मुक्त क्यों होता नहीं?
शुद्धात्मा संसार में रहते हुए देखा कहीं??
चारित्र दर्शन शील संयम किसलिये शुभ कार्य हैं?
निज आत्मा को शुद्ध करने के लिये अनिवार्य हैं?
शक्ति की ही अपेक्षा है आत्मा परमात्मा!
बिन शक्ति प्रगटे कहो कैसे बनेगा परमात्मा
बनने की शक्ति बिन है तीनों तरह का आत्मा हैं
इस शक्ति का ही अपेक्षा, बहिरात्म अन्तर आत्मा!!
रिपु कर्म के रहते हुए निज को गिन मैं सिद्ध हूँ!
भगवान हूँ! सर्वज्ञ हूँ! त्रैलोक्य दर्शी! शुद्ध हूँ!!
बनने की ऐसी शक्तिया की अपेक्षा से मानना!
पर अभी की इस अपेक्षा कुछ भी नहीं है जानना!!

—आत्मविद्या!

सांख्य मती का कथन है मैं हूँ सिद्ध समान!
सदा शुद्ध है आत्मा साक्षय रूप भगवान!!
जैनमती पुष्ट कर रहे सांख्य मती सम काज!
सांख्य धर्म सम हो रहा धर्म-प्रवर्तन आज!!

ऐसा सैकड़ों वर्ष पूर्व ही से अपने योग बल द्वारा भगवान कुन्द कुन्द आचार्य ने जान लिया था कि आगे काल दोष के प्रभाव से अनेकान्तनय ज्ञान का ह्रास होगा और मिथ्या एकान्त

नय ज्ञान के कारण कुछ जीव कपिल मुनि व सांख्य धर्म समान अपनी आत्मा को बिना अपेक्षा दृष्टि के सदा शुद्ध मानते रहेंगे। ऐसा मानने से अनेकों आत्माओं का महा अहित होगा। इस उद्देश्य से श्री तब आचार्य महाराज को यह कथन करना ही पड़ा कि —

कम्मइय वग्गणाहिं अपरिणमंतीहिं कम्मभावेण।
संसारस्स अभावो पसज्जदे संखसमओ वा ॥

अर्थात् कार्माण वर्गणाओं के ज्ञानावरणादि द्रव्य कर्म नहीं परिणमन करेंगे तो इस संसार का और संसारी जीवों की अवस्थाओं का अभाव हो जायगा। और भाव को ? यदि तुम भी अपनी आत्मा को जिस प्रकार सांख्यमत अकर्ता, कर्म से भिन्न, सदा शुद्ध मानता है उसी प्रकार मानते रहोगे तो तुम्हारी आत्मा सांख्यमत के समान सदा सिद्ध स्वरूप ही रहेगी। ऐसा मानने से संसार का अभाव हो जायगा।

भगवान कुंदकुंद आचार्य

इस आचार्य महाराज के ऐसे यथार्थ कथन के आधार पर से उनके अनेकान्त अभिप्राय को जानते हुए — अनोखी न्याय युक्तियाँ प्रगट हुईं —

निज आत्मा परमात्मा में कर्म का ही भेद है।
यदि कर्म कट जावें सभी तब शुद्धरूप अभेद है॥
परमात्मा सम कर्मनय ? स बन सके परमात्मा ?
स्वात्मानुभव या लक्ष्य लेने मात्र से नहिं आत्मा॥
स्वात्मानुभव या लक्ष्य लेने मात्र से हो आत्मा।
देखा किसी ने है कभी बनता हुआ परमात्मा॥

स्वात्मानुभव से मुक्ति ही यदि प्राप्त हो जाती कभी ।
अथवा अकेले चिंतवन से मुक्ति हो जाती कभी ॥
अथवा अकेले ज्ञान नय से कर्म कट जाते कभी ।
तब तो बहुत ही श्रेष्ठ था बचते परिश्रम से सभी ॥
स्वात्मानुभव या लक्ष्य के यदि साथ में हो धर्मनय ।
तपध्यान संयम शील चारित्रादि ऐसे कर्म नय ॥
स्वात्मानुभव या लक्ष्य तब ही फलित उत्तम है सभी ।
करनी बिना परमात्मा बनते हुए देखा कभी ॥

परमात्म बनने के लिये चारित्र संयम चाहिये ।
सत शील पंच महाव्रतों युत-तपश्चर्या चाहिये ॥
उत्तमक्षमादि सुयुक्त दसधर्मों का पालन चाहिये ।
बारह समुज्वल भावनाओं का प्रचालन चाहिये ॥
भगवान की शुद्धात्मा का ध्यान होना चाहिये ।
शुद्धात्मा के लक्ष्य से शुद्धत्व आश्रय चाहिये ॥
तीर्थंकरों के पुण्यसम पुण्यानुबन्धी चाहिये ।
*पुण्यात्मा के पुण्य का नित उदय होना चाहिये
होती तभी है निर्जरा जब तीव्र पुण्य उदय रहे ।
पापोदयों में निर्जरा का अर्थ ही विकल्पित रहे ॥
पापात्मा, पुण्यात्मा की अपेक्षा से भेद है ।
जो भेदनय जाने नहीं उस पर बड़ा ही खेद है॥
पापात्मा, परमात्मा बनता हुवा देखा कभी ।
पुण्याकृति - तीर्थंकरों के पुण्य को देखो सभी ॥

न्यायतर्कवाद

क्रोधादि मान कषाय बिन हैं कौन ऐसे आत्मा ।
जो स्वयं अपने आग्रहों से बन गये बहिरात्मा ॥
चारित्र संयम शीलव्रत बिन कौन ऐसे आत्मा ।

जो स्वय अपने आप ही ये बने अन्तर आत्मा ॥
चारित्र संयम शील व्रत बिन कौन ऐसे आत्मा ।
जो स्वय अपने आप ही ये हो गये शुद्धात्मा ॥
यदि अपनी ही आत्मा परमात्मा बनते सभी।
तो पचमूल महाग्रन्थों के कथन ना होते कभी ॥

—अपूर्ण —न्याय तर्कवाद ।

आगे द्वितीय भाग म और भी विशेष विस्तार से आत्म विद्याओं के चमत्कार मई ! आश्चर्यजनक ! अनोखे कथन ! अनोखी न्याय युक्तियों द्वारा उन महान वीतरागी दिगम्बर जैन आचार्यों के सत्यार्थ कथनों के आधारों पर से उनके—अनेकांत अभिप्रायों को लेते हुए किए गए हैं। तथा सम्यक् अनेकान्तमय न्यायबलों एव न्याय तर्क वादों द्वारा और भी न्याय युक्तियों के अनुपम अद्वतीय अन्य कथन भी लिए गये हैं । जो शीघ्र ही प्रकाशित होंगे।

निश्चय व्यवहार धर्म दोनों ही उपादेय,
साथी हैं जीवन के दोनों न छोड़िये ।
मोक्ष मार्ग म प्रधान आपस म मित्रवान,
आगम प्रमाण जान मुख को न मोड़िये ॥
भेद और अभेद रूप रत्नत्रय धर्मवाद ।
यही सत्यार्थवाद दोनों को जोड़िये ।
निश्चय का लाभ यदि लेना है भव्य जीव,
सम्यक् व्यवहार से नाता न तोड़िये ।।

—न्यायबल ।



प्राप्ति स्थान
सेठ निरंजनलाल जैन मंत्री
भा० व० शांतिवीर दि० जैन सिद्धांत संरक्षिणी सभा
१९८, कालबादेवी,
बम्बई
प्र० १०००]



विनय प्रिंटिंग वर्क्स ९९ मल्हारगंज इन्दौर

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

मानव का धर्म



संग्रहकर्त्ता -
श्री १०५ क्षुल्लक आदिसागर महाराज



प्रकाशक
दिगम्बर जैन समाज, रेवाड़ी (गुड़गावां)

प्रथम बार (१०००) वीर नि० २४९३ मूल्य विनय

मानव का कर्त्तव्य

१- अपने इष्टदेव को मुख्य मानना ।

२- अपने इष्टदेव की आराधना करना ।

३- उनके बतलाये हुवे मार्ग पर चलना ।

४- विधर्मियों से बचना उनकी सगत छोड़ना ।

५- खोटी लगी आदतों को छोड़ना आगे वास्ते बचना

६ जो व्यक्ति सही ठीक धम के अनुकूल कहे, वैसे तो मानना वरना सुनना जरुर ।

७- धम वही है जो अपने से पहले बतलागये ।

८- आजका धर्म अराजकता बतलाता है तभी सज्जनो को नहीं सुनते ।

९- सयम पालना मुख्य कर्त्तव्य बतलाया है ।

१०- सयम वही है जिससे बात बने ।

११- सयम के बगर मनुष्य नहीं होता ।

१२- सयम पालने वाला अपने से हर दूसरे को अपनी, तथा समझदार मानता है ।

१३- विपरीत बोलने वाले से बात न करना ।

१४- राह चलते को खोटे वचन नही निकालना ।

१५- राह चलते इधर उधर नही देखना, इससे पहले तो सयम अर्थात कन्ट्रोल नही चलता दूसरे हिंसा हो जाती है ।

१६- राह चलते का लिया हुवा सामान नहीं लाना ।

१७ शरीर पर भड़कीले अशोभनीय वस्त्र नही पहरना

१८- जिससे दूसरे देखकर ग्लानि करें और अपनी भी भलाई नहीं होवे ।

१९ भोजन करना प्रकृति अनुकूल करना जिस से सेहत ठीक रहे ।

२०- जिस समाज तथा सभा मे जावें योग्य स्थान पर बैठें उस समाज की योग्य बातो को सुनना ।

२१- सुनकर ठीक होवे अनुसरण करे ।

२२- रात को बाजारो मे नहीं घूमना ।

२३- रात को आराम लेने से पहले ही भोजन कर लेना सोने से पहले कुछ अच्छी बातों का सुमरण कर लेना

२४- प्रात उठ कर रोज क्रिया से निवट कर अपने धर्म के अनुकूल धर्म स्थान पर जाना ।

२५ धर्म स्थान पर पहले जाने से दिन भर मन स्वस्थ रहता है ।

२६- शब्द वह बोलना जो निभा सको ।

२७ दिया हुवा वचन निभाना जरुरी ।

२८- ऐसे स्थान पर नहीं खडे होना, जहाँ पर दुपचरित्र की सम्भावना होवे अथवा खोटा काय जुवा आदि होता होवे ।

२९- सनीमा जाने से अनेक कुविपन बढते हैं।

३० इतना नही घबराना जो दूसरे भी

३१- अपनी ली हुई प्रतिज्ञा नही छोड़ना ।
३२ जो भी किसी को वचन दिया पूर्ण करना ।
३३- गुरू, माता-पिता का कहना ठीक समझ
आवे जवाब में उत्तर नही देना ।
३४- हिंसा से हर समय बचना ।
३५- हिंसक जन्तुओं से दूर रहना ।
३६- घातक हथियार बगैर सोचे समझे नही छूना ।
३७- अनजान फल नही छूना ना खाना ।
३८- फरेब करने वाले से कुयारा व्यापार नही करना ।
कर लिया होवे निमटा लेना ।
३९- किसी को धोखा नही देना, जो इन कार्यों पर
चलता है वही सच्चा मनुष्य है ।

मुद्रक मेफेयर प्रिंटिंग प्रेस, रेवाड़ी ।

* णमो सिद्धाणं *

An Ideal Sadhu



—आदर्श साधु

Published by—

L. Kastoorchand Khushalchand

Sacheti

Introduction



Here is a summation of all the important duties and religious activities of a Jain Sadhu or an Ideal Sadhu Readers can very well assert his ideal because The Ideal Sadhu follows and then preaches the well known Principles of Ahimsa and Truth We have very well experienced the untireless and invincible power of Ahimsa in our national fight This booklet will show you that how and why a Jain Sadhu is termed a complete Ahimsak in thought, word and deed His character is glorified by his observance the vow of complete Brahmcharya and Contentment etc

On the title a bust of Jain Divakar Prasidh Vakta Pandit Muni Sri Chauthmalji Maharaj is given and inside the book a photo of Tapasvi Muni Sri Nemichandji Maharaj is given simply for an introduction of a Jain Sadhu or an Ideal Sadhu

In the end the Great Mantra is given in its original form

—Printer

AN IDEAL SADHU

Renunciation and Ahinsa in thought word and deed are the guiding principles of a Jain Sadhu They do not take any intoxicant or eat meat They never take the food cooked or purchased for their sake but they accept a little out of the food prepared in the ordinary course for their regular consumption by a family leading a pious life Neither they ask any body to prepare any special food like *Halva Puri* for them nor do they get angry with anybody who does not serve them with food when they visit him for *Bhikksha* (i e food) As they do not keep over anything for the night or for the next day with them, they bring only as much food as will be sufficient to feed them for the time Jain Sadhus do not eat or drink even water during night time and after sunset and before sunrise They do not take any medicine during the night howsoever fatal their disease may be Neither in summer season and very hot weather they fan themselves nor in winter season howsoever cool it

may be they warm themselves before fire or wrap themselves in more cloths than the ordinary 3 sheets which they can generally keep with them What to say of warming themselves before fire they do not even burn fire at all Neither they put on gloves and socks nor they use shoes of any kind or wooden sandals They do not use any means of conveyance like hor e, motor rail etc but always walk bare footed Jain Sadhus do not own any landed or household prope ty or keep with them any sort of cash or deposit with anybody el e on thier behalf Wherever they go they put up in any house provided by the public after taking the owners permission They do n t smell scents Similarly they do not wear flower garlands or even touch the flower The pots and utensils used dy them for food and dr nk are always all made of wood or clay As they can ot keep with them utensils made of metals So much that they cannot keep w th them even a needle required to sew clothes Whenever they require needle they borrow it from public and return it the same day If by mistake they forget to return it the same day and happen to keep it over night they observe one day fast and if by chance it is lost and not returned to the owner they observe 3 days fast as penance They carry on their back while on tours the little and absolutely necessary par phernaliya like books of study utensils and cloths which they keep with them and never take anybody s hlep to carry the same for them or use rail, motor or other means of conveyance for trans porting the same They keep a white and neat piece of cloth on their mouth for two important reasons Firstly

it is an emblem or sign of a Jain Sadhu who can be called an ideal and TIAGI SAINT observing the vow of Celibacy, Ahinsa, truth and Contentment. Secondly it acts as a saviour of small germs in the air by checking the hot breath of the mouth coming from into direct contact with them and thus causing their instantaneous death. It also checks spitting on the religious scripture at the time of reading. They keep with them a sort of wooden sweeping stick called OGHA or a protector of insects. In day light when everything is visible with a naked eye while walking, they take special care to see that no ant insects etc. not crushed under their feet. While in the darkness of the night specially when they cannot use any sort of lamp or torch to light the way for them and when these insects are not visible They first clean the path with their wooden sweeping before moving further each step to avoid crushing the insects etc. under their feet.

Jain Saints uproot the hairs of their head beard and moustaches with their hands. They never get them selves shaved by a barber nor do they use any razor or scissors for shaving purposes.

Jain Saints never touch a women. They always observe the vow of complete *Brahmcharya* (Celibacy) in thought word and deed. They never allow women even to hear their lecture in the night at the place where they have put up. Even in day time women cannot remain with them unless there is the presence of atleast one man. They sit on cots, chairs, ...

They live at one place for the four months of *Sarawan to Kartik* (Hindi months) and deliver lectures daily They tour from place to place during the remaining eight months of Summer and Winter During this period of eight months they cannot stay at one place for more than a month Their daily business is to deliver lectures to the public They point out the path of Salvation and Purity even to great Kings & Rulers The chief subjects or topics of their lecture are as follows —

There is God Obey Him Do no harm the innocent Do not tell lie Do not steal Consider woman other than your wife as mother sister or daughter and do not cohabit with your wife also on the 2nd 5th 8th 11th and 14th 15th day of every fortnight of the month and also during manses and sacred day If you possess money spend it for the good of others Do not take meat or wine Do not give false evidence Give up taking food in the night and never smoke or drink Do not be extravagent Do not get addicted to any vice Avoid prostitution Never be a hunter Do not sacrifice a hen a goat or a buffalo at the alter of any God or Goddess They deliver lectures on important discourses like these giving many reasons

Great dacoits give up robbing by hearing their lectures Thousands of people give up their bad habits by hearing their teachings They tour even in rural and hilly tracts and lecture to the people even upto three times a day and bring them to the right path of Salva and Purity



The Jain Sadhu who observed 52 days fast in Cawnpore

The Jain Saints deliver lectures even to the Kings and Rulers *dauntlessly* and boldly They do not worry themselves about anything They observe complete fasts for a very long time

Some of them do not take anything except boiled water for a month Some keep fast even upto two months with the result that their weight is greatly reduced You will find one Photo of a Jain Saint (doing 52 days fast) whose weight is reduced by 34 lbs

The Jain saints repeat and meditate over this Great Mantra

णमो अरिहन्ताण	I bow before the Great Soul (who is free from passions of anger attachment etc)
णमो सिद्धाण	I bow before the Great God (who is free from all troubles)
णमो आयरियाण	I bow before the Acharya following path of religion
णमो उवज्झायाण	I bow before the Religious Teacher Saint

णमो लोये सव्वसाहूण I bow b fore the Saint (w observes 5 great sa red Vow

Jain Saints are not idol worshippers i e they d not worship idols They always meditate over the Grea God and His qualities Thousands of people deriv immense benefit from the teachings of the Jain Saints



द्रा'त सरक्षिणी सभा द्वारा प्रसारित—

—अनोखी अनेकान्त—

न्याय-युक्तियां

★

संग्रहकर्ता

सनत्कुमार जैन, गुना